

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 19: पृथु के यज्ञ

21 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



समस्त यज्ञों के स्वामी भगवान् के प्रति भक्ति में, राजा पृथु सौ अश्वमेध यज्ञ करते हैं, ऋत्विजों के मन्त्रोच्चार तथा एक समृद्ध राज्य की महिमा के बीच पवित्र अग्नि में आहुति देते हुए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

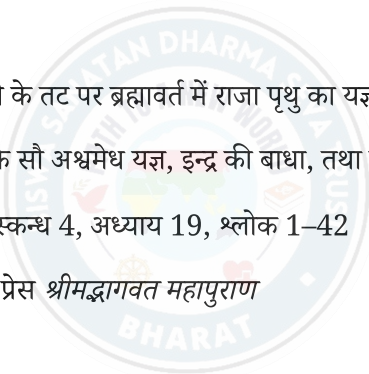
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में, राजा पृथु ने विवेक तथा उचित व्यवस्था से पृथ्वी से समृद्धि खींची, और उनके न्यायपूर्ण शासन में संसार में समृद्धि लौटी। यह एकोनविंश अध्याय राजा को अपने समृद्ध राज्य को भगवान् की उपासना की ओर मोड़ते दिखाता है। भक्ति में, पृथु सौ अश्वमेध यज्ञ करते हैं;

किन्तु जैसे-जैसे महान् अनुष्ठान अपनी पूर्णता के निकट आते हैं, स्वर्ग के राजा इन्द्र पृथु की बढ़ती महिमा से ईर्ष्या करने लगते हैं और, बार-बार, अन्तिम आहुति में बाधा डालने वेश बदलकर यज्ञ का अश्व चुरा लेते हैं — यहाँ तक कि अपनी चोरियों को ढाँपने असत्य तपस्वी-वेश भी बिखेरते हैं। पृथु के वीर पुत्र विजिताश्व हर बार पीछा कर अश्व पुनः प्राप्त करते हैं; और जब क्रोध उठने लगता है, ऋषि हस्तक्षेप करते हैं, पृथु को स्मरण कराते हुए कि वे स्वयं भगवान् के अंश हैं, धर्म की रक्षा के लिए अवतरित। उनके वचन पर वे अपना हाथ रोक लेते हैं, इन्द्र से मेल कर लेते हैं, और पवित्र अवभृथ-स्नान के साथ अपने यज्ञ पूर्ण करते हैं, प्रसन्न देवगण द्वारा आशीर्वादित। यह बाधा के बीच अटल भक्ति का, और उस विवेक का अध्याय है जो एक पूर्ण अंक के अभिमान के बजाय शान्ति चुनता है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 19 (एकोनविंश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: राजा पृथु के सौ अश्वमेध यज्ञ
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (जिसमें ऋषियों के वचन उद्धृत हैं)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: सरस्वती के तट पर ब्रह्मावर्त में राजा पृथु का यज्ञ-स्थल
- केन्द्रीय विषय: पृथु के सौ अश्वमेध यज्ञ, इन्द्र की बाधा, तथा ऋषियों का हस्तक्षेप तथा मेल-मिलाप
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 1-42
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 18 ने बताया कि कैसे राजा पृथु ने, पृथ्वी देवी के परामर्श को मानकर, भूमि समतल की और उससे समस्त प्राणियों को पोषित करने वाले अन्न दुहे, ताकि संसार में समृद्धि लौटे तथा सभ्यता फले। यह एकोनविंश अध्याय उस समृद्धि के फल को उपासना की ओर मुड़ते दिखाता है, जैसे राजा भगवान् के लिए यज्ञों की एक महान् श्रृंखला करते हैं।

सौ अश्वमेध यज्ञ

पवित्र ब्रह्मावर्त में, पूर्ववाहिनी सरस्वती के तट पर मनु के क्षेत्र में, राजा पृथु भगवान् के प्रति भक्ति में सौ अश्वमेध यज्ञ करने के लिए दीक्षित हुए।

मैत्रेय उवाच

अथादीक्षत राजा तु हयमेधशतेन सः ।

ब्रह्मावर्ते मनोः क्षेत्रे यत्र प्राची सरस्वती ॥ १ ॥

maitreya uvāca athādīkṣata rājā tu hayamedha-śatena saḥ brahmāvarte manoḥ kṣetre yatra prācī sarasvatī

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: तब राजा पूर्ववाहिनी सरस्वती के तट पर मनु के क्षेत्र ब्रह्मावर्त में सौ अश्वमेध यज्ञ करने के लिए दीक्षित हुए। (स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 1)



जैसे पृथु अपने महान् यज्ञ करते हैं, समुद्र, पर्वत, तथा समस्त लोक एवं उनके शासक अपनी भेंट लाते हैं — रत्न, अन्न, तथा प्रत्येक प्रकार के उपहार — समृद्धि से उमड़ते एक राज्य को (श्लोक 8-9)।

इस महान् कार्य को आशीर्वाद देने के लिए यज्ञपति दूर नहीं रहे: स्वयं विष्णु उस यज्ञ-स्थल में साक्षात् उपस्थित हुए — प्रत्येक हृदय में विराजमान परमात्मा, समस्त लोकों के स्वामी, तथा कहीं भी अर्पित प्रत्येक यज्ञ के सच्चे भोक्ता। उनके साथ ब्रह्मा तथा शिव आए, समस्त लोकों के अधिष्ठाता देवताओं तथा उनके अनुयायियों सहित; ऋषि कपिल, नारद तथा दत्तात्रेय, सनक कुमार के नेतृत्व में योगसिद्ध महात्मा, तथा गन्धर्वलोक एवं सिद्धलोक के गण भी उनके साथ आए और प्रकट होते हुए उनकी स्तुति की।

यत्र यज्ञपतिः साक्षाद्भगवान् हरिरीश्वरः ।

अन्वभूयत सर्वात्मा सर्वलोकगुरुः प्रभुः ॥ ३ ॥

yatra yajña-patiḥ sākṣād bhagavān harir īśvaraḥ anvabhūyata sarvātmā sarva-loka-guruḥ prabhuḥ

अर्थ: वहाँ, प्रत्येक यज्ञ के सच्चे स्वामी, स्वयं परम पुरुष, परम नियन्ता, साक्षात् प्रकट हुए — समस्त प्राणियों की अन्तरतम आत्मा, समस्त लोकों के गुरु। (स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 3-6)

इन अनुष्ठानों की महिमा इतनी महान् थी, और राज्य की समृद्धि इतनी उमड़ती हुई, कि समुद्र, पर्वत, तथा समस्त लोक अपनी भेंट लाए — रत्नों के ढेर, प्रत्येक प्रकार का अन्न, तथा असंख्य उपहार — राजा तथा उनके यज्ञ का सम्मान करने (श्लोक 7-9)।

इन्द्र को ईर्ष्या

किन्तु पृथु की उपासना की महिमा ने स्वर्ग के राजा इन्द्र के हृदय में एक अयोग्य भय जगाया। यह पूर्वदृष्टि से देखकर कि पृथु, अपने सौ यज्ञों से, उनके अपने प्रसिद्ध कर्मों के समान या उनसे बढ़कर हो जाएँगे, इन्द्र — स्वयं सौ यज्ञों के स्वामी शतक्रतु कहलाने वाले — पृथु की भक्ति के महान् उत्सव को सहन न कर सके।

तदभिप्रेत्य भगवान् कर्मातिशयमात्मनः ।

शतक्रतुर्न ममृषे पृथोर्यज्ञमहोत्सवम् ॥ २ ॥

tad abhipretya bhagavān karmātiśayam ātmanaḥ śata-kratur na mamṛṣe pṛthor yajña-mahotsavam

अर्थ: यह पूर्वदृष्टि से देखकर कि पृथु उनके अपने कर्मों से बढ़कर हो जाएँगे, सौ यज्ञों के स्वामी इन्द्र पृथु के महान् यज्ञोत्सव को सहन न कर सके। (स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 2)



पृथु की बढ़ती महिमा से ईर्ष्यालु, इन्द्र वेश बदलकर उतरते हैं और गुप्त रूप से यज्ञ का अश्व चुरा ले जाते हैं, अपनी चोरी को छिपाने तथा अन्तिम अनुष्ठान में बाधा डालने असत्य तपस्वी-वेश बिखेरते हुए (श्लोक 10-21)।

अन्तिम अनुष्ठान में बाधा डालने, इन्द्र गुप्त रूप से, एक तपस्वी के वेश में, उतरे और यज्ञ का अश्व चुरा ले गए। और अपनी चोरियों को ढाँपने उन्होंने चारों ओर असत्य तथा पाखण्डी संन्यास-वेश बिखेर दिए — पवित्रता के छलपूर्ण रूप, जिनके अधीन बाद में मन्दबुद्धि जन भटकाए जाएँगे।

राजा का पुत्र अश्व पुनः प्राप्त करता है

हर बार जब अश्व चुराया गया, पृथु के वीर पुत्र, विजिताश्व, ने पीछा किया, वेश धारी इन्द्र को जा पकड़ा, और अश्व को अपने पिता के यज्ञ-स्थल में वापस लाए। इस प्रकार पुनः प्राप्त अश्व बार-बार लौटाया गया; किन्तु दिखावटी तपस्वी का असत्य वेश, जिसे इन्द्र ने आरम्भ किया, बाद में अल्पबुद्धि जनों द्वारा अपना लिया गया।

वीरश्चाश्वमुपादाय पितृयज्ञमथाव्रजत् ।

तदवद्यं हरे रूपं जगृह्जानिदुर्बलाः ॥ २२ ॥

vīraś cāśvam upādāya pitṛ-yajñam athāvrajat tad avadyaṁ hare rūpaṁ jagṛhur jñāna-durbalāḥ

अर्थ: वीर पुत्र ने अश्व को पुनः लेकर अपने पिता के यज्ञ में लौटे; और वह छलपूर्ण वेश जो इन्द्र ने धारण किया था, बाद में मन्दबुद्धि जनों द्वारा अपना लिया गया। (स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 22)



पृथु के वीर पुत्र विजिताश्व वेश धारी इन्द्र का पीछा करते हैं, यज्ञ का अश्व पुनः प्राप्त करते हैं, और उसे अपने पिता के यज्ञ-स्थल में लौटाते हैं (श्लोक 22-25)।

ऋषियों का हस्तक्षेप

जैसे-जैसे इन्द्र की बाधा बनी रही, ऋत्विज क्रुद्ध हो उठे और उनके विनाश का आवाहन करने को उद्यत हुए, और स्वयं पृथु, उकसाए जाकर, स्वर्ग के राजा के विरुद्ध अपना धनुष उठाने को तैयार हुए। किन्तु ऋषियों ने उन्हें रोका। उन्होंने पृथु को स्मरण कराया कि वे वस्तुतः कौन थे — मात्र एक अपकृत राजा नहीं, बल्कि स्वयं भगवान् जो वेन के दुष्कर्मों से नष्ट हुए धर्म को, इस युग के अनुकूल रीति से, पुनः स्थापित करने अवतरित हुए; वेन के ही शरीर से जन्मे, वे विष्णु के अंश थे।

भवान् परित्रातुमिहावतीर्णो
धर्मं जनानां समयानुरूपम् ।
वेनापचारादवलुप्तमद्य
तद्देहतो विष्णुकलासि वैन्य ॥ ३७ ॥

*bhavān paritrātum ihāvatīrṇo dharmam janānām samayānurūpam venāpacārād avaluptam
adya tad-dehato viṣṇu-kalāsi vainya*

अर्थ: (ऋषियों ने कहा:) आप यहाँ प्रजा के धर्म की रक्षा के लिए अवतरित हुए हैं, उस युग के अनुरूप, जिसे वेन के दुष्कर्मों ने नष्ट कर दिया; उसके ही शरीर से, हे वेन-पुत्र, आप आए हैं, विष्णु के अंश। (स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 37)

उन्होंने उन्हें परामर्श दिया कि वे इन्द्र से शत्रुता में न पड़ें, बल्कि इस विषय को छोड़ दें। स्वयं ब्रह्मा ने हस्तक्षेप किया, सौर्वे यज्ञ की पूर्णता को रोकते हुए, ताकि पृथु, निन्यानबे से सन्तुष्ट, स्वर्ग में युद्ध भड़काने के बजाय इन्द्र से मेल कर लें। उनके वचन पर महान् राजा ने अपने क्रोध पर विजय पाई और इन्द्र से मेल कर लिया।

ब्रह्मा का यह परामर्श मात्र शान्त रहने की प्रार्थना नहीं है; इसमें एक विशिष्ट शिक्षा निहित है। वे पृथु को स्मरण कराते हैं कि वे तथा इन्द्र समान रूप से उसी परम पुरुष के अंश हैं, अतः उनके बीच क्रोध मानो एक ही परिवार के भीतर का विवाद है (श्लोक 33)। वे आगे कहते हैं कि विधाता के हाथों घटी प्रतिकूलता को अपने प्रयास से ठीक करने का हठ नहीं करना चाहिए, क्योंकि विधाता की व्यवस्था को पलटने का जितना अधिक प्रयत्न किया जाए, उतना ही गहरा हम भौतिक चिन्ता के अन्धकारतम प्रदेश में डूबते हैं (श्लोक 34)। तथा वे चेतावनी देते हैं कि महापुरुष जो भी करता है, संसार उसी का अनुकरण करता है (श्लोक 36): यदि पृथु के यज्ञ इन्द्र की मृत्यु पर समाप्त होते, तो लोग उसी हिंसा के मार्ग को अपनाते, क्षमा के मार्ग को नहीं। अतः निन्यानबे पर रुक जाना कोई छोटी विजय नहीं, बल्कि वह गहनतर धर्म-रक्षा है जिसके लिए एक अवतार अवतरित होता है।

यज्ञों की पूर्णता

इस प्रकार यज्ञों की महान् श्रृंखला शान्ति में अपने समापन तक पहुँची। किसी महान् अनुष्ठान का समापन करने वाला पवित्र अवभृथ-स्नान करके, महाकर्मा पृथु ने वरदायी देवगण के आशीर्वाद प्राप्त किए, जो उनकी भक्ति से भली प्रकार सन्तुष्ट थे।

कृतावभृथस्नानाय पृथवे भूरिकर्मणे ।
वरान्दुस्ते वरदा ये तद्बर्हिषि तर्पिताः ॥ ४० ॥

kṛtāvabhṛtha-snānāya pṛthave bhūri-karmaṇe varān dadus te varadā ye tad-barhiṣi tarpitāḥ

अर्थ: महाकर्मा पृथु को, पवित्र समापन-स्नान करके, वरदायी देवगण ने, उनके यज्ञ से भली प्रकार सन्तुष्ट, अपने आशीर्वाद दिए। (स्कन्ध 4, अध्याय 19, श्लोक 40)



ऋषियों के वचन पर, पृथु अपने क्रोध पर विजय पाते हैं और इन्द्र से मेल कर लेते हैं; यज्ञ पवित्र स्नान के साथ पूर्ण होते हैं, और प्रसन्न देवगण अपने आशीर्वाद अर्पित करते हैं (श्लोक 37-42)।

महान् ऋषियों तथा ब्राह्मणों ने राजा की प्रशंसा की, उन्हें बताते हुए कि कैसे समस्त वर्गों के प्राणी — पितरों के लोक तथा स्वर्ग से, ऋषि तथा साधारण जन समान रूप से — उनके निमन्त्रण पर आए तथा उनके सम्मान और दान से सन्तुष्ट हुए। इस प्रकार एकोनविंश अध्याय शान्ति तथा पूर्णता के स्वर पर समाप्त होता है, उस महान् कृपा के लिए तैयार जो अगला अध्याय लाएगा, जब स्वयं भगवान् पृथु के यज्ञ-मण्डप में प्रकट होते हैं।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. समृद्धि उपासना में लौटाना सर्वोत्तम है। पृथु अपने राज्य की समृद्धि को भोग की नहीं बल्कि भगवान् के लिए यज्ञों की एक महान् श्रृंखला की ओर मोड़ते हैं। धन तभी सबसे सुरक्षित तथा सबसे पवित्र है जब वह, कृतज्ञता से, अपने दाता को लौटाया जाए (श्लोक 1)।
2. उन्नत भी ईर्ष्या में गिर सकते हैं। इन्द्र, स्वर्ग के राजा, दूसरे की बढ़ती महिमा सहन नहीं कर सकते और चोरी तथा छल तक झुक जाते हैं। ईर्ष्या पद का आदर नहीं करती; वह उच्च को भी भ्रष्ट कर सकती है (श्लोक 2)।
3. असत्य पवित्रता एक वास्तविक संकट है। इन्द्र द्वारा अपनी चोरियों को ढाँपने बिखेरे पाखण्डी वेश मन्दबुद्धि जनों के लिए एक स्थायी जाल बन गए। संन्यास का नकल छलता है; सच्चा धर्म अपने तत्त्व से जाना जाता है, अपने वेश से नहीं (श्लोक 22)।
4. स्मरण करें कि आप कौन हैं, और अपना हाथ रोकें। ऋषि पृथु को उनकी भगवान् के अंश के रूप में पहचान स्मरण कराते हैं, और वे युद्ध करने के बजाय अपने क्रोध पर विजय पाते हैं। अपने सच्चे स्वरूप तथा आह्वान को जानना हमें छोटे संघर्षों से रोकता है (श्लोक 37)।
5. शान्ति एक पूर्ण अंक से अधिक मूल्यवान् है। पृथु अपना सौवाँ यज्ञ जाने देते हैं और इन्द्र से मेल कर लेते हैं। पूर्णता के अभिमान के बजाय सामंजस्य चुनना किसी भी अनुष्ठान से बड़ी विजय है (श्लोक 37-40)।

एक भाक्तेपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय का सबसे शिक्षाप्रद मोड़ वह है जो कभी पूरी तरह घटित ही नहीं होता: वह युद्ध जो पृथु नहीं करते। यहाँ एक राजा सही पक्ष में है — अपकृत, बाधित, स्वर्ग के अपने शासक की क्षुद्रता से उकसाया गया — और प्रत्येक सांसारिक प्रवृत्ति कहती है कि उन्हें आगे बढ़ना चाहिए, चोर को कुचल देना चाहिए, और अपने सौ पूरे कर वह महिमा दावा करनी चाहिए जिसकी इन्द्र भी बराबरी न कर सकें। और ऋषि कहते हैं: नहीं। वे इनकार नहीं करते कि उनके साथ अन्याय हुआ है; वे बस उन्हें स्मरण कराते हैं कि वे कौन हैं, और उनसे उसे छोड़ देने को कहते हैं। यहाँ एक कठोर तथा सुन्दर विवेक है। हमारा अपना बहुत-सा संघर्ष गलत होने से नहीं बल्कि सही होने और उसका एक इंच भी न छोड़ने से आता है। हम शान्ति पाने के बजाय जीतना पसन्द करते हैं; हम उसे क्षमा करने के बजाय जिसने हमसे चुराया, अपना सौवाँ यज्ञ पूरा करना पसन्द करते हैं। पृथु एक और मार्ग दिखाते हैं। अपनी गहनतर पहचान की ओर लौटाए जाकर — कि वे यहाँ धर्म की रक्षा के लिए हैं, अपने अभिलेख की रक्षा के लिए नहीं — वे एक पूर्ण अंक से एक कम पर रुक जाते हैं, उसी को गले लगाते हैं जिसने उनके साथ अन्याय किया, और किसी भी पूर्ण अनुष्ठान से अधिक मूल्यवान् शान्ति पाते हैं। अध्याय चुपचाप पूछता है कि क्या हम भी, एक बड़े सामंजस्य के लिए, किसी कठिनाई से अर्जित अधिकार को रख सकते हैं।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, एक कम पर रुकने का अभ्यास करें। किसी ऐसे संघर्ष के विषय में सोचें जिसमें आप सचमुच सही पक्ष में हैं — आप पर बकाया कोई ऋण, योग्य कोई क्षमायाचना, कोई बिन्दु जिसे आप विजय तक दबा सकते हैं — और विचार करें कि क्या उसे बिल्कुल अन्त तक दबाना उस मूल्य के योग्य है जो वह शान्ति में चुकाएगा। इन्द्र से मेल किए पृथु की भावना में, ऐसे एक विषय को चुनें और जानबूझकर उसे छोड़ दें: छोटे अपराध को क्षमा करें, अन्तिम माँग छोड़ें, उसे गले लगाएँ जिसने आपके साथ अन्याय किया। ऐसा करते हुए, उस समर्पण को इन शब्दों के साथ भगवान् को अर्पित करें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”, यह स्मरण करते हुए कि आप, पृथु की भाँति, यहाँ अपने अभिलेख की रक्षा के लिए नहीं बल्कि एक उच्चतर धर्म की सेवा के लिए हैं। एक पूर्ण अंक के अभिमान के बजाय शान्ति चुनने में, आप उस राजा का अनुसरण करते हैं जिसने ऋषियों के वचन पर अपने क्रोध पर विजय पाई।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का एकोनविंश अध्याय राजा पृथु को अपने समृद्ध राज्य को पवित्र ब्रह्मावर्त में सौ अश्वमेध यज्ञों के द्वारा भगवान् की उपासना की ओर मोड़ते दिखाता है। उनकी महिमा इतनी महान् है कि समस्त लोक अपनी भेंट लाते हैं — किन्तु स्वर्ग के राजा इन्द्र ईर्ष्यालु हो उठते हैं और, बार-बार, वेश बदलकर यज्ञ का अश्व चुराते हैं, अपनी चोरियों को ढाँपने असत्य तपस्वी-वेश बिखेरते हुए। पृथु के वीर पुत्र विजिताश्व हर बार अश्व पुनः प्राप्त करते हैं; और जब ऋत्विज तथा राजा दोनों क्रुद्ध हो उठते हैं, ऋषि हस्तक्षेप करते हैं, पृथु को उनकी भगवान् के अंश की सच्ची पहचान की ओर लौटाते हुए, धर्म की रक्षा के लिए अवतरित। उनके वचन पर, तथा ब्रह्मा के हस्तक्षेप से, पृथु अपना हाथ रोक लेते हैं, अपना सौवाँ यज्ञ जाने देते हैं, और पश्चात्तापी इन्द्र से मेल कर लेते हैं। महान् अनुष्ठान पवित्र समापन-स्नान के साथ शान्ति में पूर्ण होते हैं, और प्रसन्न देवगण अपने आशीर्वाद अर्पित करते हैं। इस प्रकार अध्याय ऐसी भक्ति दिखाता है जो बाधाओं में भी दृढ़ बनी रहती है, तथा ऐसा विवेक जो पूर्ण अंक का दावा करने के बजाय शान्ति को चुनना बेहतर समझता है — इसी भाव पर यह हमें अगले अध्याय में भगवान् के प्राकट्य के लिए तैयार करता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, एकोनविंश अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-19-king-prithu-performs-a-hundred-horse-sacrifices-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट